समाज को पीडित अगोचर शक्ति के अस्तित्व का विवाद

Suryakanth
Research Scholar
Department of Hindi, Bangalore University, Bangalore

संसार की सृष्टि के रहस्य पर अनेक चर्चाएँ अनादिकाल से होती आ रही हैं। यह निर्विवाद है कि संसार की सृष्टि ईश्वर के द्वारा हुई है। इस सृष्टि में अन्य प्राणियों की अपेक्षा बहुत बुद्धिमान मनुष्य मात्र है अतएव वाद-विवाद अधिक मानव जाति में ही हो रही है। आज तक भगवान के रूप, रंग,आकार किसी ने नहीं देखा है और किसी को दिखा भी नहीं सकता है। समूचे जनता का विश्वास कि भगवान तो है, वह एक अगोचर शक्ति है। उसे अनुभव कर सकते हैं और अभिव्यक्त कर सकते हैं किन्तु अपनी आँखों से देख नहीं पा सकते हैं तथा इतरों को दिखा भी नहीं सकते हैं। भगवान के सम्बंध में जिसने अस्तित्व पर प्रश्न उठये हैं, वह साधारण व्यक्ति नहीं शिक्षित और बुद्धिमान है। समाज को भ्रमित दिशा पर ले जाने का प्रयत्न इन्हीं लोगों के द्वारा होना हास्यास्पद है। साहित्य में पौराणिक कथाओं और ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर लिखित अनेक कृतियाँ उपलब्ध हैं। शिक्षा ग्रहण के संदर्भ में अध्ययन करने का अवसर भी मिला हुआ है। फिर भगवान या अगोचर शक्ति पर इतना संदेश प्रकट करना उनकी प्रतिभा, मानसिक परिपक्वता, संचित ज्ञान इनमें से किस का प्रभाव माने जाये? यह अत्यंत क्लिश्त प्रश्न बना हुआ है। भगवान ने केवल स्त्री और पुरुष जाति का निर्माण किया लेकिन स्वार्थी मनुष्य ने अपने अस्तित्व को खायम करने के लिए अनेक जाति-उप-जातियों को बनाकर एक संकीर्णता का परिवेश का निर्माण किया। फलत: एकेश्वर और बहुईश्वरीय वाद का जन्म हुआ। केवल विवाद यहाँ तक सीमित होते तो कोई समस्या नहीं रहती थी, इसके साथ आस्तिक और नास्तिक जैसे दो वर्ग समाज में प्रवेश कर सामाजिक शांति का भंग करने क संकल्प कर बैठ गये। इसका मूल स्थापित एवं प्रचलित सम्प्रदाय, आचार-विचार, रीति-रिवाज़, धर्म, पद्धतियाँ आदि ने मानव के बीच में एक बहुत बडा दरार उत्पन्न किया। परिणाम स्वरूप मनुष्य आज धर्म, जाति, भगवान के अस्तित्व, सम्प्रदाय के नाम लड रहे हैं। मनुष्य ने अपनी मानसिक अशांति के साथ सामाजिक स्वास्थ्य को भी बिगाड रख दिया है। समाज विकास पथ पर चलने लगा, जनता का दृष्टिकोन भी बदलता गया। प्राचीन सम्प्रदाय और आचार-विचार खोकला मानने लगे। आध्यात्मिक और पारमार्थिक विचार-धाराओं को शुष्क मानने की दिशा में अग्रसर

होने लगे। स्वस्थ सामाजिक वातावरण को अपने आज्ञान के कारण भ्रामिक एव अशांतमय बनाकर प्रेक्षक के रूप में खडे हुए हैं। अनेक साहित्यकारों समाज इस दशा का यथार्थ वर्णन भी किया है तथा जनता की मूर्खता का खण्डन- मण्डन भी कर दिया। मंद बुद्धिवाले ये लोग समझने अपनी असमर्थता को दिखाकर अनावश्यक विवाद उठाकर देख रहे हैं। इस प्रकार मानव भगवान द्वारा प्रदत्त अपनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन कर रहे हैं। साहित्यकार अपने समय में गोचरित सामाजिक स्थिति गतियों को लक्षित कर रचनाएँ की है। यह निसंशय है। भक्तिकाल से आधुनिक काल तक सगुण और निर्गुण सम्प्रदायों के आधार पर चर्चा की है। कुछ विद्वानों की दृष्टि में इतना प्रचार-प्रसार कर समाज को धार्मिक रूप से विघटन करने की आवश्यकता नहीं थी। किन्तु मानव लोककल्याण से अपना कल्याण देखता है। यह सर्वविदित है। समाज को उद्धार करने के लिए बहुत सारे काम पड़े हुए हैं लेकिन उससे ज्यादा भगवान के अस्तित्व पर झगडने में जनता तुली हुई है। नास्तिक महाशयों को ध्यान में रखते हुए जयशंकर प्रसाद ने अपनी तेज शब्द धारा से प्रहार करने का प्रयत्न किया है। नास्तिकों का कहना है कि मंदिरों में भगवान नहीं है। वह केवल पत्थर है, उस पत्थर भगवान की कल्पना करना मूर्खत्व की चरमसीमा है। इस प्रकार के चिंतनों के विरुद्ध में कवि कहने लगे-

जब मानते हैं व्यापि जल भूमि में अनिल में
तारा शशांक में भी आकाश में अनल में
फिर क्यों ये हठ हैं प्यारे ! मंदिर में वह नहीं है
वह शब्द जो 'नहीं' है, उसके लिए नहीं है
जिस भूमि पर हजारों हैं सीस को नवाते
परिपूर्ण भक्ति वे उसको वही बताते
कहकर सहस्र मुख से जब है वही बताता
फिर मूढ चित्त को है यह क्यों नहीं सुहाता।

कवि ने उक्त पंक्तियों के द्वारा आस्तिकों के मूढ चित्त पर प्रहार किया है। यह संसार पंच भूतों से बना हुआ है। इसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकते हैं। इसे माननेवाले केवल भगवान को क्यों नहीं मानते हैं? पंच तत्व भी उनके अधीन में हैं। हजारों संख्या में रोज भगवान के सामने सिर झुकाते हैं। यह सब देखते हुए भी तुम्हारे मूर्ख चित्त को यह सूझता नहीं है कि बिना भगवान लोग मंदिर क्यों जाते हैं? पूजा-पाठ क्यों करते हैं? कवि के इन प्रश्नों का उत्तर देना आसान नहीं है। यह तुम भी जानते हो तेरे हृदय एक आत्मा तो है ही। लेकिन परमात्मा का प्रश्न उठता है, उसे क्यों स्वीकारते

नहीं है। यह मंदिर भी पंच तत्वों के आधार पर बना हुआ है। मनुष्य का बहुत बडी कमी यह है कि स्वयं अज्ञानी होने पर भी उसे मानने के लिए तैयार नहीं होता है। प्रकृति में होनेवाले सारे परिवर्तन आँखों के सामने हैं। बिना किसी आज्ञा के वह चल भी नहीं सकता। इस प्रकार की एक अगोचर शक्ति पर विश्वास रखने वाले केवल मंदिर के भगवान को न मानना यह बहुत बडी विडंबना है। कवि ने इस प्रकार की चित्तवृत्ति वालों को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से खण्डन करने का प्रयास किया है। मनुष्य के शरीर में भी एक आत्मा समाहित है। वही इनके सुकर्म-कुकर्मों का मूल है। पाप-पुण्य की चेतावनी देने वाले भी वही है। अंतर्निहित आत्मा को जैसे देखा नहीं जा सकता है वसे ही मंदिर की पत्थर से बनी मूर्ति में भगवान को देख नहीं सकते हैं लेकिन अनुभव कर सकते हैं। शिल्पी पत्थर में छिपा भगवान का दर्शन कराते हैं उसी प्रकार विशुद्ध मन से भक्ति करनेवालों को स्वयं तुम्हारी आत्मा ही भगवान व परमात्म का दर्शन कराती है। प्रथमत: उस पर विश्वास करना आवश्यक है।

कवि ने अपने समय के समाज होने वाले आस्तिक-नास्तिकों के विवादों को ध्यान में रखते हुए भविष्य की पीढि के लिए मार्गदर्शन हेतु अपने विचारों को सोदाहरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। मूर्ख लोग आज भी इस सृष्टि रहस्य को जान नहीं पा रहे हैं। पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशात कहकर ऋषि मुनियों ने पंचतत्वों का परिचय कराया था। उसपर भी अनेक चर्चाएँ हुई थी लेकिन समर्थन करने के लिए कोई प्रमाण मिलता नहीं। वैज्ञानिक रूप से हम जितनी भी प्रगति की जाये, फिर भी सृष्टि और अगोचर शक्ति पर विजय पाना कष्टसाध्य है। अत: अपनी मूर्खता के कारण समाज को पथभ्रष्ट करने की प्रक्रिया से दूर रहे और समाज शांति स्थापित होने की दिशा में कदम बढाये।